'नूरजहाँ-गुट' की परिकल्पना आलोचनात्मक परीक्षण

एम. नूरुल हसन

Scanned with CamScanner

डा. बेनीप्रसाद ने अपने विद्वत्तापूर्ण ग्रंथ 'अ हिस्ट्री ऑव जहाँगीर' में यह परिकल्पना प्रस्तुत की है कि एक 'गुट' जिसमें नूरजहाँ बेगम, एत्मादुद्दौला, आसफ़ खाँ तथा शाहजादा खुर्रम शामिल थे, मुगल दरबार में नूरजहाँ के जहाँगीर से विवाह के तुरंत बाद प्रभावशाली हो गया और 1620 तक वैसा ही बना रहा।[1] उसका विघटन तब हुआ जब नूरजहाँ ने यह समझ लिया कि शाहजहाँ सिंहासन प्राप्त होने पर अपने दबंग स्वभाव के कारण उसे पृष्ठभूमि में ढकेल देगा। इसलिए उसने उसे अधिक नरम व्यक्ति शहरयार से जिसकी शादी उसकी पुत्री लाड़ली बेगम के साथ तय की गई थी, स्थानच्युत करने का निश्चय किया। 'गुट' ने शाही सेवा में खाली जगहों पर अपने आदमियों को इस कदर भरा कि अब सिर्फ उसकी अनुकंपा ही सम्मान तथा पद का रास्ता खोलने में साधक होने लगी। इसने स्वाभाविक रूप से अन्य अमीरों में ईर्ष्या और द्वेष को जन्म दिया।[2] फलस्वरूप, इस काल में दरबार दो दलों में बँट गया : नूरजहाँ 'गुट' के समर्थक, तथा प्रतिद्वंद्वी दल जिसकी ओर से सिंहासन के लिए उम्मीदवार था खुसरो।[3]

डा. बेनीप्रसाद 'गुट' की क्रियाशीलता के लिए निम्नलिखित बातों को कारण मानते हैं :

एत्मादुद्दौला तथा उसके परिवार के मनसबों में तीव्र वृद्धि;[4] 1612 ई. तथा 1622 ई. के बीच महावत खाँ की पदोन्नति में बाधा (तथा संभवतः उस सरीखे दूसरे लोगों की प्रगति में भी)[5]; खाने आज़म की कैद;[6] खुर्रम की अप्रत्याशित उन्नति,[7] परवेज़ की अवनति;[8] तथा खुसरो के भाग्य का उतार चढ़ाव।[9]

इस परिकल्पना का सावधानी से परीक्षण आवश्यक है, क्योंकि यदि इसे स्वीकार कर लिया जाए तो इसका अर्थ होगा कि जहाँगीर के शासन काल के प्रारंभ में ही 'गुट' ने अपने स्वार्थी हितों के लिए (इस तरह से जहाँगीर के हितों की उपेक्षा करते हुए) षड्यंत्र रचना शुरू कर दिया था। दलबंदी दरबार में 'गुट' और उसके प्रतिद्वंद्वियों के इर्द-गिर्द केंद्रित थी। विभिन्न स्रोतों तथा घटना-क्रम के सूक्ष्म विवेचन से पता चलता है कि इस परिकल्पना को सिद्ध नहीं किया जा सकता।[10] फलस्वरूप, इस काल की प्रमुख राजनीतिक घटनाओं को ठीक तरह से समझने के लिए दरबार में दलों की प्रकृति, अमीर वर्ग के आंतरिक दबावों तथा सम्राट, की भूमिका का और गहन विश्लेषण आवश्यक है।

यह परिकल्पना मुख्यतः यूरोपीय स्रोतों, विशेषकर सर टॉमस रो के वक्तव्यों, पर आधारित है। 1616 ई. में शाहजहाँ के खुसरो को अपनी निगरानी में लेने के संदर्भ में[11] 'टामस' निश्चित तौर पर नूरजहाँ, एत्मादुद्दौला, आसफ खाँ तथा शाहजहाँ के गुट का उल्लेख करता है तथा जहाँ वह यह कहता है कि खुर्रम की मुख्य शक्ति नूरजहाँ से प्राप्त समर्थन में निहित है[12]। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि रो तथा अन्य विदेशियों की जानकारी खुसरो, खुर्रम तथा नूरजहाँ के बारे में प्रचलित अफवाहों पर आधारित थी, इसलिए उनके कथनों पर पूर्णतः विश्वास नहीं किया जा सकता। लेकिन यह महत्वपूर्ण है कि 1616 ई. के अंत में नूरजहाँ और शाहजहाँ के बीच मतभेद तथा उसके और खुसरो के बीच संधि की अफ़वाहें प्रचलित हो गईं—ये अफवाहें 1617 ई. में और फिर 1619 ई. में पर्याप्त रूप से सामान्य हो गईं : जैसा कि निम्नलिखित वक्तव्यों से पता चलता है :

1616—आसफ़ खाँ और खुसरो के बीच मैत्री की अफ़वाह।[13]

Scanned with CamScanner

12-12-1616— "सुल्तान खुसरो नूरजहाँ की पुत्री से शादी रचाएगा तथा स्वतंत्रता प्राप्त करेगा और सब दल उसका समर्थन करेंगे।"[14]

21-8-1617— "नूरमहल और आसफ़ खाँ अपने पिता की सम्मति से खुसरो से संधि एवं मैत्री करने आए और बड़ी प्रसन्नता की बात है कि उसकी मुक्ति की आशा है।"[15]

25-8-1617—नूरजहाँ के साथ खुसरो की दावत की रिपोर्ट तथा एक ऐसी संधि की संभावना जो खुसरो की मुक्ति तथा खुर्रम का पतन लाएगी।[16]

17-9-1619— यह अफवाह कि बादशाह ने शाहजादे खुर्रम को पदच्युत कर दिया है।[17]

30-9-1619— खुर्रम की अवमानना तथा खुसरो की मुक्ति की अफ़वाहें। "उसका (खुसरो का) उत्थान दूसरे का पतन होगा, जिसकी उच्चाकांक्षाओं को किसी भी तरह समरूपता में नहीं लाया जा सकता"[18]।

पूरे तौर पर देखें तो उपरिलिखित वक्तव्य यही इशारा करते हैं कि 1616ई. के अंत से नूरजहाँ और शाहजहाँ के संबंध खास तौर पर मैत्रीपूर्ण नहीं थे। अन्य यूरोपीय स्रोत नूरजहाँ के अत्यधिक प्रभाव अथवा खुसरो की लोकप्रियता तथा शाहजहाँ के उसके प्रति द्वेष का उल्लेख करते हैं, पर वे नूरजहाँ तथा शाहजहाँ के बीच किसी दलगत संधि का प्रमाण प्रस्तुत नहीं करते।[19] फ़ारसी स्रोतों में मुतामद खा जोरदार शब्दों में नूरजहाँ के अत्यधिक प्रभाव तथा उसके सभी सगे-संबंधियों तथा मित्रों को राज्य में पद तथा नियुक्तियाँ प्राप्त होने की शिकायत करता है तथा कहता है कि हिंदुस्तान की सबसे अच्छी जागीरें उन लोगों के हाथ में हैं जो या तो उसके रिश्तेदार थे या उसके सहयोगी[20]। मुतामद खाँ द्वारा नूरजहाँ और शाहजहाँ के बीच दलगत संधि के उल्लेख का असल में सवाल ही नहीं उठता। इसके विपरीत वह यह सिद्ध करने के लिए व्यग्र है कि नूरजहाँ स्वार्थों के कारण शाहजहाँ के प्रति द्वेषपूर्ण तथा अन्यायपूर्ण थी। चूँकि ऐसा लगता है कि उसके दोनों उदाहरणार्थ ग्रंथ (इकबालनामा-ए-जहाँगीरी की तीसरी जिल्द तथा अहवाल-ए-शाहज़ादगी-ए-शाहजहाँ पादशाह) शाहजहाँ के शासन काल में लिखे गए थे, नूरजहाँ के विरुद्ध उसका पूर्वाग्रह समझ में आ सकता है[21]। कामगार हुसैनी भी, जिसने अपनी "मआसिर-ए-जहाँगीरी" 1630 में लिखी, इसी दलील को अपनाता है।

वली सरहिंदी की कम मशहूर कृति 'तवारीख-ए-जहाँगीर शाही', जो जहाँगीर के शासन के चौदहवें वर्ष में लिखी गई, की रचना शाही अनुकंपा प्राप्त करने के उद्देश्य से की गई थी[22]। इसमें जहाँगीर, एत्मादुद्दौला, आसफ़ खाँ, शाहजादों तथा अमीरों में से कुछ की प्रशस्तियाँ दी गई हैं। लेकिन यह काबिलेगौर है कि इसमें नूरजहाँ का उल्लेख तक नहीं है।

कामी शीराजी द्वारा 1625-26 में काबुल में रचित, 'फतहनामा-ए-नूरजहाँ बेगम'[23] महाबत खाँ के विद्रोह से संबंधित है, और इस रूप में इसमें नरूजहाँ और शाहजहाँ के बीच बीते समय में दलगत संधि का कोई उल्लेख अथवा संकेत नहीं मिलता।

इलियट द्वारा किसी समकालीन ग्रंथ के अंश के रूप में माना गया 'इंतिख़ाबे-जहाँगीर शाही' सूक्ष्म आंतरिक परीक्षण पर बहुत बाद में लिखा गया संदेहास्पद प्रामाणिकता का स्रोत लगता है।[24] पर इस स्रोत में उल्लिखित किस्से को भी 'गुट' परिकल्पना का समर्थक नहीं माना जा सकता। किस्सा संक्षेप में यूँ है[25]:

खानेआजम तथा खानेजहाँ की उपस्थिति में महाबत खाँ ने जहाँगीर से नूरजहाँ के अत्यधिक प्रभाव की शिकायत की। उसने अंतहीन कैद में जकड़े खुसरो की मुक्ति की[26] तथा

Scanned with CamScanner

उसे बादशाह के किसी विश्वासपात्र को सौंपने की बात भी रखी। बादशाह की सुरक्षा तथा साम्राज्य की शांति खुसरो के जीवन पर निर्भर थी। खानेआजम तथा खानेजहाँ ने इस वक्तव्य का समर्थन किया तथा अगले दिन जहाँगीर ने खुसरो को खानेजहाँ के सुपुर्द इस शर्त के साथ किया कि वह दरबार में हाजिर होकर बादशाह के प्रति सम्मान प्रदर्शित करेगा[27] खुसरो को सवारी के लिए घोड़ा भी दिया गया। पालकी में महाबत खाँ ने जहाँगीर का साथ छोड़ा। कुछ दिनों तक तो जहाँगीर सतर्क बना रहा पर कश्मीर पहुँचते ही वह फिर से नूरजहाँ के नियंत्रण में आ गया[28]।

ग्रंथ की संदेहास्पद प्रामाणिकता एवं 1620 ई. में किसी अमीर द्वारा नूरजहाँ के खिलाफ जहाँगीर के कान भरने के निहायत असंभव वाकये-जैसे तथ्यों को एक तरफ रखें तो यह घटना गुट-परिकल्पना की बाबत कई अन्य मुश्किलें पेश करती है। प्रथम, फरवरी 1620 ई. में लगभग तीन सप्ताह तक महाबत खाँ जहाँगीर के साथ था[29] पर इसके पहले ही खुसरो पर लगाई गई पाबंदियों में ढील दे दी गई थी। द्वितीय, इस प्रमाण का उपयोग 'गुट' परिकल्पना के समर्थन में उसी हालत में किया जा सकता है कि जब यह सिद्ध कर दिया जाए कि 1620 ई. में नूरजहाँ अपने प्रभाव का उपयोग, संभवतः शाहजहाँ के हित में खुसरो को कैद में रखने के लिए कर रही थी। मगर, जैसा कि आगे दिखाया गया है, शाहजहाँ की खुसरो को अपने साथ दक्षिण ले जाने की माँग तथा लगभग उसी समय शहरयार के साथ लाड़ली बेगम की सगाई शाहजहाँ तथा दरबारी मंडल के बीच पारस्परिक संदेह की ओर इशारा करती हैं। ऐसा लगता है कि शाहजहाँ द्वारा खुसरो की हिरासत को शहरयार की लाड़ली बेगम से सगाई द्वारा प्रभावहीन करने का प्रयास किया गया था।

इस प्रकार से यह स्पष्ट हो जाएगा कि शाहजहाँ तथा नूरजहाँ के बीच दलगत भेद का प्रत्यक्ष प्रमाण अत्यंत संदिग्ध प्रकृति का है। अब हम उन तथ्यों तथा घटनाओं का परीक्षण कर सकते हैं, जिनकी व्याख्या डा. बेनीप्रसाद ने 'गुट' परिकल्पना के रूप में करने की कोशिश की है।

एतमादुद्दौला तथा उसके परिवार के मनसबों में तीव्र बढ़ोतरी से इनकार नहीं किया जा सकता। पर उनके मनसबों में यह बढ़ोतरी 1616 ई. से विशेष रूप से उल्लेखनीय हो जाती है। 1616 ई. के प्रारंभ तक इस परिवार के मनसब थे—एतमादुद्दौला 6000/3000; आसफ खाँ 4000/2000; इनकाद खाँ 1500/500; इब्राहीम खाँ 2500/2000। मगर इस परिवार की उन्नति को उस दौर की ऐतिहासिक परिस्थितियों के प्रकाश में देखना चाहिए। अकबर के काल से ही उच्च मनसब प्रमुख अमीरों के परिवारों के कई सदस्यों को दिए जाने की प्रथा थी[30]। जहाँगीर ने परंपरा जारी रखी और एतमादुद्दौला का परिवार ही अकेला नहीं था जिसके कई सदस्यों को उच्च मनसब मिले थे।

अपनी मुक्ति के बाद ही खानेआजम को 1615 ई. में 5000 का मनसब दिया गया था, जो 1616 ई. में 7000 कर दिया गया। जबकि उसी वर्ष एतमादुद्दौला का मनसब 7000/5000 तक बढ़ा दिया गया। खानेआजम के पुत्र जहाँगीर कुली खाँ को 1615 ई. में 2500/2000 के मनसब तक प्रोन्नत किया गया तथा उसी वर्ष इलाहाबाद का सूबेदार नियुक्त किया गया। 1617 ई. में उसे बिहार का सूबेदार बना दिया गया, जिस पद पर वह 1619 ई. तक बना रहा। खानेआजम के छोटे पुत्र खुर्रम (कमाल खाँ) का मनसब 2500 का था जबकि उनके भाई अब्दुल्ला को 1618 में 1000/300 पर उन्नत किया गया। इसी तरह खानेखानाँ 1618 ई. में 7000/7000 के मनसब पर एतमादुद्दौला के इस मनसब पर पहुँचने से एक वर्ष पूर्व

Scanned with CamScanner

पहुँचा। वह इस पूरे दौरान दक्खिन का वास्तविक सेनानायक बना रहा।[31] उसके पुत्र शाहनवाज खाँ को 1616 ई. में 5000/2000 2-3 अस्पा पर उन्नत किया गया। इसी वर्ष आसफ़ खाँ को 5000/4000 2-3 अस्पा तक उन्नत किया गया। खानेखानाँ के अन्य पुत्रों को भी उच्च मनसब दिए गए। अब्दुल्ला खाँ फ़िरोज जंग तथा उसके परिवार के सम्मिलित मनसब 1618 ई. में 12000 सवार दो अस्पा सेह अस्पा तक पहुँच गए थे, जो 1616 ई. में एत्मादुद्दौला और इसके सम्मिलित मनसबों की तुलना में कोई कम नहीं थे।[32]

यद्यपि 1612 ई. के बाद महाबत खाँ का व्यक्तिगत मनसब 4000/3500 से अधिक नहीं बढ़ाया गया, पर 1614 ई. में उसे 3 करोड़ दाम मूल्य की अतिरिक्त जागीर प्रदान की गई।[33] 1615 ई. में उसे दो अस्पा सेह अस्पा श्रेणी प्रदान की गई, जिसे बाद में उसके हाज़री में आवश्यक संख्या में सेना प्रस्तुत न करने के कारण कम करना पड़ा।[34] यह भी याद रखना चाहिए कि यद्यपि उसे मेवाड़ की कमान सौंपी गई थी, पर वह कुछ अधिक नहीं कर पाया था। मगर इस काल में महाबत खाँ को किसी भी तरह से पृष्ठभूमि में नहीं धकेल दिया गया था। उसे मेवाड़ अभियान से खानेआज़म को वापस लाने के लिए भेजा गया था।[35] उसे दक्खिन के महत्वपूर्ण मिशन सौंपे गए थे। 1617 ई. में उसे काबुल की अत्यंत महत्वपूर्ण कमान पर निरंतर होनेवाले कबाइली विद्रोह को नियंत्रण में लाने के लिए नियुक्त किया गया।[36] उसके पुत्र अमानुल्ला को 1615 ई. में 1000/600, 1619 ई. में 1500/400 तथा 1620 ई. में 2000/1500 के मनसब प्रदान किए गए। फिर उसी की सिफारिश पर मुबारिज़ खाँ का मनसब 2000/1500 तक बढ़ाया गया और सरदार अफ़गन को 1000/400 पर नियुक्त किया गया।[37] 1618 ई. में अनिराय सिंह दालन से खुसरो की सुरक्षा का भार वापस लेकर उसके मनसब को बढ़ाकर 2000/1600 कर दिया गया। 1620 ई. के प्रारंभ में महाबत खाँ की प्रार्थना पर उसकी नियुक्ति बंगश अभियान पर की गई।[38] यदि 'इंतखाबे जहाँगीर शाही' पर विश्वास किया जाए, तो महाबत खाँ किसी भी तरह से जहाँगीर की अनुकंपा की परिधि से बाहर नहीं था।

अध्ययन काल के अंतर्गत, अमीरों को बड़ी संख्या में पदोन्नति प्राप्त हुई। पहले उल्लिखित के अतिरिक्त जिन कुछ अमीरों की पदोन्नति हुई थी; वे थे:

ख़्वाजा जहाँ 3000/1000 (1614), 3500/2200/(1615), 5000/2500 (1615), 5000/3000 (1620), को आगरा की सूबेदारी प्राप्त थी। ईरान के राजदौत्य के कार्य से लौटने पर खानेआलम का मनसब 5000/3000 (1620) बढ़ा दिया गया। ख़्वाजा अबुल हसन 4000/2000 (1618), 5000/2000 (1620) मीर बख़्शी के पद पर था। कुलिज़ खाँ 6000/5000 (1611) काबुल का सूबेदार नियुक्त हुआ। उसका पुत्र चिन कुलिज गुजरात का सूबेदार नियुक्त हुआ। मुर्तज़ा खाँ 6000/5000 (1613) पंजाब का सूबेदार बना तथा प्रभावशाली पद पर रहा। खाने जहाँ लोदी निश्चय ही अत्यधिक कृपापात्र रहा तथा इस काल में उसके पास आगरा तथा मुल्तान की सूबेदारी रही। मिर्ज़ा रुस्तम सफ़वी का मनसब 1618 ई. में 5000/1500 कर दिया गया। बहादुर खाँ 1620 ई. में 5000/4000 पर उन्नत हुआ। इसी प्रकार से दिलावर खाँ, बीर सिंह देव बुंदेला, सूरज सिंह, खाने दौराँ, मुक़र्रब खाँ, सादिक़ खाँ, सैफ़ खाँ, अमानत खाँ, रिज़ावी खाँ, केशव दास मारू, रामदास कछवाहा आदि पर बड़ी कृपा की गई[39]।

उपरोक्त अमीरों की पदोन्नति से पता चलता है कि पदोन्नतियाँ पर्याप्त रूप से विस्तृत थीं तथा यह कहना सही नहीं होगा कि "पदोन्नति का एकमात्र पारपत्र 'गुट' की अनुकंपा

Scanned with CamScanner

थी।'' उपर्युक्त लोगों में से अनेक या तो तथाकथित 'गुट' के विरोधी थे या उससे संबंधित नहीं थे,[40] जबकि अन्य अनेकों के संबंध में ज्ञात नहीं है। इस प्रकार यह मानना सही नहीं होगा कि इस काल में दरबार 'गुट' के पक्ष और विपक्ष दो दलों में बँटा हुआ था। खानेआज़म ने एक गोपनीय पत्र में, जो उसने 1613 ई. में जहाँगीर को लिखा था, कुलीज खाँ, अब्दुल्ला खाँ फिरोज़ जंग, महाबत खाँ, खाने जहाँ तथा मुर्तज़ा खाँ के प्रति अपनी नापसंदगी स्पष्ट कर दी है। कुलीज़ खाँ और मुर्तज़ा खाँ ने स्पष्टतः खाने दौराँ के विरुद्ध षड्यंत्र रचा था।[41] शाहजहाँ के मुर्तज़ा खाँ से संबंध किसी भी तरह स्नेहपूर्ण नहीं थे[42] यद्यपि वह निश्चय ही खुसरो का पक्षधर नहीं था। महाबत खाँ नूरजहाँ का विरोधी चाहे रहा हो या नहीं पर निश्चित रूप से आसफ़ खाँ तथा शाहजहाँ दोनों का विरोधी था।[43] अतः खानेखाना और अब्दुल्ला खाँ के बीच विद्वेष विद्यमान लगता है।[44] इस प्रकार से यह दृष्टिगोचर होगा कि अमीरों में अनेक दल थे जो कि एक-दूसरे के खिलाफ़ षड्यंत्र रचा करते थे। लेकिन किसी भी एक दल को दूसरे को शक्ति अथवा महत्व के स्थानों से हटा बाहर कर देने में सफलता नहीं मिली।

यदि शाहजादों की स्थिति का सावधानीपूर्वक विश्लेषण किया जाए, तो यह प्रकट होगा कि 'गुट' परिकल्पना वास्तविक स्थिति की संतोषजनक व्याख्या प्रस्तुत नहीं करती।

खुसरो को केवल स्वयं जहाँगीर के विरुद्ध सिंहासन के दावेदार के रूप में ही प्रस्तुत नहीं किया गया था, वरन् उसने 1606 ई. में वस्तुतः विद्रोह ही कर दिया था। 1608 ई. में यह आरोप लगाया गया कि वह बादशाह की जान लेने के षड्यंत्र में शामिल हो गया था। 1610 ई. में बिहार में उसके नाम से विद्रोह हो गया। इन परिस्थितियों में खुसरो के प्रति जहाँगीर का रुख़ नूरजहाँ से उसके विवाह के पूर्व ही कठोर हो चुका था। उसने परवेज़ की स्थिति बनाने की कोशिश की थी, पर परवेज़ पहले तो मेवाड़ अभियान में असफल रहा और फिर दक्खिन में। इसके अतिरिक्त न तो वह सेनानायक के रूप में और न ही प्रशासक के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सका। परिणामस्वरूप, यह बिल्कुल स्वाभाविक ही था कि 1613 ई. में खुर्रम को मेवाड़ अभियान का नेतृत्व करने का अवसर प्रदान किया गया।[45]

ऐसा लगता है कि खुर्रम किशोरावस्था से ही महत्वाकांक्षी था। उसी ने 1608 ई. में खुसरो के तथाकथित षड्यंत्र का पता लगाया था। हम यह निर्णय करने की स्थिति में नहीं हैं कि खुसरो वास्तव में षड्यंत्र का दोषी था या नहीं, पर षड्यंत्र की जानकारी ने खुर्रम को अपने पिता की कृतज्ञता का पात्र बना दिया।[46] जब उसे मेवाड़ अभियान पर नियुक्त किया गया, तो उसने खानेआज़म पर खुसरो के हित में षड्यंत्र करने का दोषारोपण किया। जहाँगीर को तो खुसरो और खानेआज़म पर पहले ही से संदेह था, उसके कारण उसने खुर्रम पर विश्वास किया और खानेआज़म को कैद में डाल दिया।[47] उसी समय खुसरो पर फिर से प्रतिबंध लगा दिए गए।[48] इस प्रकार यह देखना आसान है कि ये कार्य खुर्रम के कहने पर किए गए।

मेवाड़ अभियान में खुर्रम की विजय ने न केवल साम्राज्य की प्रतिष्ठा में वृद्धि की, अपितु जहाँगीर को यह मानने के लिए कायल कर दिया लगता है कि उसके पुत्रों में खुर्रम सबसे अधिक योग्य था। इसलिए यह स्वाभाविक था कि 1615-16 ई. में, जब दक्खिन में स्थिति नियंत्रण के बाहर बनी रही, तो उसने परवेज को, जो असफल सिद्ध हो चुका था, इलाहाबाद स्थानांतरित करने तथा खुर्रम को दक्खिन की पूरी कमान की जिम्मेवारी सौंपकर भेजने का निर्णय लिया। खुर्रम को अतिरिक्त प्रतिष्ठा प्रदान करने के लिए उसका मनसब बढ़ा दिया गया और उसे शाह का खिताब प्रदान किया गया। इसी समय अनीराय सिंह दालान से खुसरो की हिरासत, संभवतः खुर्रम को पुनः आश्वस्त करने के लिए, आसफ़ खाँ को स्थानांतरित कर

Scanned with CamScanner

दी गई।[49]

दक्खिन की समस्या जहाँगीर के शासनकाल के प्रारंभ से ही पेचीदी होती जा रही थी और अनेकों विख्यात सेनानायकों द्वारा सुलझी नहीं थी। सेनानायकों में निरंतर झगड़े तथा घूस और भ्रष्टाचार की अफ़वाहें इस असफलता के प्रमुख कारण समझे जाते रहे थे। जब बादशाह के प्रतिनिधि के रूप में परवेज़ स्थिति पर काबू पाने में असमर्थ रहा, और खानेखानाँ ने कुमुक के लिए आग्रह किए, तो खुर्रम सुस्पष्ट विकल्प था। इसमें कोई संदेह नहीं कि खुर्रम की नियुक्ति ने दक्खिन अभियान की सफलतापूर्ण समाप्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया।[50] मुग़लों ने जो कुछ गँवाया था, फिर से प्राप्त कर लिया। संभवतः वे और अधिक कुछ नहीं चाहते थे। यह आशा की जाती थी कि इस आधार पर की गई संधि स्थायी सिद्ध होगी तथा उस दीर्घकालीन युद्ध का अंत कर देगी, जिसने दक्खिन की अर्थ-व्यवस्था को लगभग समाप्त ही कर दिया था और जो कोष के लिए बहुत अपव्यय सिद्ध हुआ था। खुर्रम के भव्य स्वागत ने दक्खिन के राज्यों को भी प्रभावित किया होगा। कुछ भी हो, खुर्रम बादशाह का कृपापात्र हो गया, उसे शाहजहाँ का अभूतपूर्व ख़िताब मिला, मनसब में अप्रतिम वृद्धि हुई तथा वह मनोनीत उत्तराधिकारी के रूप में उभरा।[51]

ऐसा लगता है कि 1619 ई. तक यह समझा जाने लगा था कि शाहजहाँ अत्यधिक शक्तिशाली हो रहा है और ऐसी स्थिति पैदा होने देना बुद्धिमानी नहीं होगी जिसमें वह अपने को बादशाह की कृपा पर निर्भर समझना बंद कर दे। फलस्वरूप, 1619 ई. में खुसरो को मुक्त कर दिया गया और उसी वर्ष परवेज़ का मनसब 20,000/10,000 तक बढ़ा दिया गया।[52] खुसरो की मुक्ति शाहजहाँ को पसंद नहीं आई होगी[53] और जब उसे दूसरी बार दक्खिन को जाने के लिए कहा गया, तो उसने खुसरो को अपने साथ ले जाने पर जोर दिया। इस जिद से ऐसा संकेत मिलता है कि उसे संभवतः इस बात का डर था कि दरबारी मंडल जहाँगीर को कुछ होने की हालत में खुसरो को सिंहासन पर बैठा देगा। उस समय शाहजहाँ की स्थिति इतनी मजबूत थी कि खुसरो को अपने साथ ले जाने की उसकी माँग अस्वीकार नहीं की जा सकी। लेकिन यह बहुत संभव है कि इस माँग को पसंद नहीं किया गया और उसी समय यह निर्णय लिया गया कि शहरयार की सगाई लाड़ली बेगम[54] से, संभवतः शाहजहाँ की महत्वाकांक्षा पर प्रतिबंध के रूप में,[55] कर दी जाए। शाहजहाँ की बढ़ती हस्ती पर कुछ हद तक एक अंकुश की तरह परवेज और शहरयार तैनात तो किए गए पर प्रत्यक्षतः उसके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की गई। न केवल खुसरो को ही उसे सौंप दिया गया, वरन् जब वह दक्खिन की ओर चला तो एक शानदार सेना तथा मनसबदारों और अहदियों का एक बड़ा काफिला उसके साथ रवाना किया गया।[56]

एक ऐसी भी स्थिति आई जब शाहजहाँ के हित बादशाह के हितों से भिन्न हो गए। नूरजहाँ के हित फिर भी बादशाह के हितों से घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे; उसमें निश्चय ही यह समझने की अक्ल थी कि उसकी अपनी स्थिति पूरी तरह से उसके पति के जीवन पर निर्भर थी। इस तरह उसके तथा जहाँगीर के हितों में द्वंद्व देखना संभव नहीं है और इसके प्रभाव मंडल के पीछे संभवतः यही वजह थी। मगर 1620 ई. तक जो भी निर्णय लिए गए, चाहे वे किसी सीमा तक नूरजहाँ से प्रभावित थे, निश्चित रूप से जहाँगीर के अपने निर्णय थे। नूरजहाँ के लिए शाहजहाँ से जहाँगीर के हितों से भिन्न अपने स्वार्थ के लिए मैत्री करने का कोई विशेष उद्देश्य प्रतीत नहीं होता। इस प्रकार शाहजहाँ की स्थिति एक 'गुट' के अस्तित्व के कारण नहीं, वरन् शाही नीति के अंश के रूप में बनाई गई थी। खुसरो के खिलाफ़ कदम

Scanned with CamScanner

शाहजहाँ के कहने पर उठाए गए थे; और अंततः अन्य शाहजादों की स्थिति शाहजहाँ की महत्वाकांक्षाओं पर प्रतिबंध लगाने के विचार से मजबूत की गई थी।[57]

जहाँगीर के शासनकाल में मुगल अमीर वर्ग में एक गहरा संकट परिलक्षित होता है। अमीरों की अपने तथा अपने सहयोगियों के लिए अत्यधिक उच्चतर मनसब प्राप्त करने की आकांक्षा, तथा जहाँगीर द्वारा उदारता से ये मनसब प्रदान करने की स्थिति ने एक कठिन परिस्थिति उत्पन्न की मालूम पड़ती है। मनसबों तथा मनसबदारों की बढ़ती हुई संख्या के अनुपात में पर्याप्त जागीरें ढूँढ़ना संभव नहीं था। इस परिस्थिति में यह स्वाभाविक ही था कि अमीरों में षड्यंत्र तथा दलगत संघर्ष हों।[58] जहाँगीर का स्वयं का स्वभाव ऐसा था कि वह ऐसी किसी परिस्थिति पर दृढ़ता अथवा दूरदर्शिता से नियंत्रण नहीं रख सकता था। वह सुगमी से प्रभावित हो जाता था और अक्सर अस्थिर चित्त रहता था।[59] साथ ही उसने काफ़ी हद तक ढिलाई का भी परिचय दिया तथा उच्च स्थानों पर अनेक ऐसे अधिकारियों को बने रहने दिया जिनकी ईमानदारी और निष्ठा में कम ही विश्वास था।[60] इसने दलबंदी को और भी बढ़ाने में सहायता की होगी। स्वाभाविक ही था कि अमीरों ने स्वयं को या तो शाहजादों या अन्य प्रभावशाली अमीरों से जोड़ने का प्रयास किया। यद्यपि इन दलों का सूक्ष्म अध्ययन अभी होना है, दो टिप्पणियाँ अंतरिम रूप से की जा सकती हैं: (अ) कि दलों और साँधयों का स्वरूप परिवर्तनशील था, और (ब) कि किसी भी एक दल को इतना अधिक शक्तिशाली नहीं माना जा सकता कि वह अन्य सभी दलों को महत्वपूर्ण स्थानों से हटा सकता। अमीर वर्ग में यह संकट जहाँगीर के शासनकाल के प्रारंभ से ही देखा जा सकता है, तथा यह कोई ऐसा नया लक्षण नहीं था जो उसकी नूरजहाँ से शादी के बाद विकसित हुआ।

जब तक अमीरुल उमरा जीवित रहा, निश्चय ही दरबार में उसका प्रमुख स्थान रहा। उसकी मृत्यु के बाद एत्मादुद्दौला पर शनैः-शनैः बादशाह की कृपा बढ़ती गई और उसे वह पद मिल गया जो अमीरुल उमरा को प्राप्त था। जहाँगीर उसकी बुद्धिमानी, योग्यता और निष्ठा पर आँख मूँदकर भरोसा करता था।[61] संभवतः नूरजहाँ के प्रति उसके स्नेह ने एत्मादुद्दौला के प्रभाव को उसी प्रकार बढ़ाने में सहायता की जिस प्रकार विवाह-संबंध ने अकबर के शासनकाल में भारमल के परिवार की उल्लेखनीय उन्नति में योगदान दिया था। पर यह दिखाने के लिए जबरदस्त साक्ष्य उपलब्ध है कि विचाराधीन काल में प्रमुख निर्णय जहाँगीर के स्वयं के थे तथा एत्मादुद्दौला के उत्कर्ष का तात्पर्य यह नहीं था कि उन अमीरों का जो उससे संबंधित नहीं थे, प्रभाव समाप्त हो गया था।

लेकिन आसफ़ ख़ाँ का रुतबा, यद्यपि वह वकील भी हो गया था, निश्चित रूप से उसके पिता की स्थिति से बहुत कम महत्वपूर्ण था।[62] शाहजहाँ के साथ उनकी पुत्री के विवाह ने इस विश्वास को अवश्य ही जन्म दिया होगा कि वह उस शाहजादे के हितों के प्रति पक्षपाती था। लेकिन जैसे ही शाहजहाँ के खिलाफ़ कदम उठाने का अवसर आया, एत्मादुद्दौला ने अपना प्रभाव शाहजादे के खिलाफ़, और एक तरह से आसफ़ ख़ाँ के ही खिलाफ़, डाल दिया।[63]

निष्कर्ष

ऊपर किया गया पुनरीक्षण 'गुट' की परिकल्पना की अपर्याप्तता को स्पष्ट कर देता है, क्योंकि यह परिकल्पना एक जटिल स्थिति का अति सरलीकृत चित्र प्रस्तुत करती है। यह मान्यता तथ्यों से मेल नहीं खाती कि 1611 ई. और 1620 ई. के मध्य नूरजहाँ, एत्मादुद्दौला, आसफ़ ख़ाँ और शाहजहाँ का एक गुट था। इस काल में यह बताने के लिए बहुत कम साक्ष्य है

Scanned with CamScanner

कि नूरजहाँ राजनीति में सक्रिय भूमिका अदा कर रही थी। उसकी स्वतंत्र राजनीतिक भूमिका जहाँगीर के स्वास्थ्य में ह्रास तथा एत्मादुद्दौला की मृत्यु के बाद शुरू होती है। मगर इस काल में ऐसा नहीं लगता कि उसने दलगत उद्देश्यों के लिए अपने प्रभाव का प्रयोग किया। जहाँ एत्मादुद्दौला की स्थिति नूरजहाँ के कारण सबल हुई होगी, उसकी जहाँगीर के प्रति सच्ची निष्ठा में संदेह करने का कोई कारण नहीं है, और उसकी गुटबंदी का साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। आसफ़ ख़ाँ की शाहजहाँ के प्रति निष्ठा भी इस बात की द्योतक नहीं है कि शाहजादे और एत्मादुद्दौला अथवा नूरजहाँ के मध्य दलगत संधि थी। वास्तव में अपनी स्थिति को सबल बनाने की अपनी इच्छा के समर्थन के लिए वह नूरजहाँ अथवा एत्मादुद्दौला की अपेक्षा अन्य अमीरों पर अधिक निर्भर रह सकता था। अंततः यह भी लगता है कि अमीरों में अनेकों दल विद्यमान थे, जो एक-दूसरे के खिलाफ़ षड्यंत्र रचा करते थे। पर यह मानना सही नहीं होगा कि ये दल मुख्यतः 'गुट' के पक्ष या विपक्ष में गतिशील थे अथवा अन्य दलों को महत्वपूर्ण स्थानों से हटाने में किसी एक दल को सफलता मिली। इस प्रकार जहाँगीर के शासनकाल की अनेक घटनाएँ तथा अमीर वर्ग का संकट उस समय स्पष्ट होगा जब कि विभिन्न अमीरों की भूमिका का अध्ययन किया जाए, तथा इन दलों की कार्यविधि और उनके संघर्षों और तनावों का और अधिक गंभीरता से विश्लेषण किया जाए।

संदर्भ

1. यद्यपि डॉ. बेनीप्रसाद यह कहकर शुरू करते हैं कि 'गुट' 1622 ई. में एत्मादुद्दौला की मृत्यु एवं शाहजहाँ के विद्रोह के साथ भंग हो गया, पर आगे चलकर वे यह भी संकेत करते हैं कि वह शहरयार की शादी के साथ टूटा।
2. वे सारे तथा समान सोच रखनेवाले अन्य जरूरी शक्ति संचय से वंचित कर दिए गए थे तथा घोर अंधकार में छोड़ दिए गए थे। अब्दुर्रहीम ख़ानेख़ानाँ ने प्रभावशाली 'गुट' से समझौता कर लिया, पर महाबत ख़ाँ-जैसे स्वाभिमानी लोगों ने उन्हें सम्मान देने से इनकार कर दिया।
3. बेनीप्रसाद, ''ए हिस्ट्री ऑव जहाँगीर'', 1940, पृ. 159-172
4. वही, 160-163
5. वही, 168
6. उसका अनादर निर्विवाद संप्रभुता के लिए खेले जा रहे उस खेल की ही एक कड़ी था-जिसमें नूरजहाँ गुट जी-जान से लगा था। वही, 204
7. वही, 164-165, 230, 242-43। ''दक्खिन से लौटने पर, जहाँ उसके हाथ कोई महत्वपूर्ण उपलब्धि नहीं लगी, उसे 'शाहजहाँ' का विशिष्ट ख़िताब तथा मनसब में अभूतपूर्व उन्नति मिली। पर गुट ने इस कार्य को बड़ी शान और गरिमा से किया, जिसका उद्देश्य अपनी ही गरिमा और प्रतिष्ठा को बढ़ाना था।'' वही, 243.
8. वही, 166, 230
9. वही, 169-172, 283-291
10. डॉ. रामप्रसाद त्रिपाठी ने 'गुट' परिकल्पना को अस्वीकृत किया है, पर ऐसा करने के लिए विस्तार से तर्क नहीं दिए हैं, राइज़ एण्ड फॉल ऑव द मुग़ल एंपायर।
11. पर्चास एण्ड हिज़ पिल्ग्रिम्स, 4 361-62, 365-66, 377-78
12. लेटर्स रिसीविंग बाय दि ईस्ट इंडिया कंपनी फ्राम इट्स सर्वेंट्स इन द ईस्ट (1896-1902), 5 362।
13. पर्चास 4 385
14. वे, 363
15. पर्चास 4 404.
16. वे, 407। नज. डिला वैल का कथन है कि नूरजहाँ ने अपनी पुत्री की ख़ुसरो से शादी का प्रस्ताव कई बार रखा पर ख़ुसरो ने प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया। निराश होकर उसने अपनी पुत्री की शादी शहरयार से कर दी। I 56-57

Scanned with CamScanner

17. इण्डिया फैक्टरीज इन इंडिया, 1/122
18. वही, 1/123
19. टेरी, पृ. 406, 411-412, जेम्स बिकफोर्ड का पत्र सर टी. स्मिथ, लैटर्स रिसीव्ड, 5/134
20. इकबालनामा-ए-जहाँगीरी (बिब. इंड.) 3/74,80
21. यद्यपि इकबालनामा की तीसरी जिल्द से ऐसा लगता है कि उसकी रचना जहाँगीर के शासनकाल में हुई थी, पर यह बड़ा असंभाव्य है कि उसकी रचना जहाँगीर के जीवित रहते तथा नूरजहाँ के शक्ति की चरम सीमा पर रहते हुए हुई होगी। इकबालनामा की सबसे पहले की ज्ञात प्रतिलिपि, तिथि 1635 (बाँकीपुर पाण्डुलिपि 560) की भूमिका में यह निश्चित रूप से लिखा है कि पुस्तक की रचना दो जिल्दों में अकबर की मृत्यु तक लिखी गई थी। जहाँगीर के शासनकाल से संबंधित तीसरा भाग इसलिए संभवतः 1635 के बाद लिखा गया होगा, जबकि मुतामद खाँ शाहजहाँ के शाही बख्शी के पद पर नियुक्त था। अहवाले-शाहजादगी-ए-शाहजहाँ पादशाह (बाँकीपुर पांडुलिपि 565 का प्रथम भाग) निश्चय ही शाहजहाँ के शासनकाल में लिखा गया था। (नूरजहाँ के शाहजहाँ के प्रति विद्वेष की आलोचना के लिए, देखिए पृ. 16-17 तथा परवर्ती)।

शाहजहाँ के इतिहासकारों के सम्मुख एक राजनीतिक द्विविधा थी : यदि वे शाहजहाँ के विद्रोह को ठीक ठहराते तो वे एक खतरनाक राजनीतिक सिद्धांत का समर्थन करते (तुल. 1658 ई. में औरंगजेब की शाहजहाँ पर कट्टूक्ति, आदाबे-आलमगीरी) मगर यदि वे विद्रोह की भर्त्सना करते, तो वह शाही गरिमा पर धब्बा होता। इसलिए शाहजहाँ के विद्रोह को जहाँगीर के विरुद्ध विद्रोह न बताकर, उसके प्रति निष्ठा का कार्य बताया, जो उसे नूरजहाँ के अवांछनीय तथा स्वार्थपूर्ण प्रभाव से मुक्त कराने के लिए था।
22. बॉडलियन, सारडन पांडु. 23 (कै. नं. 231) पृ. 389 ब, 421 अ। लेखक, कमी सरहिंदी ने मौखिक शब्दों का एक कोष बनाया था, ''फरहंगी-ए-कादि उल लुगात-ए-जहाँगीरी''। यह संक्षिप्त इतिहास शब्दकोष की भूमिका की तरह लिखा गया था।
23. बिबल्योथेक नेशनल, पेरिस (ब्लाचे 3/1874) : एक छंदबद्ध इतिहास जिसमें महाबत खाँ पर उसके विद्रोह के दौरान नूरजहाँ की विजय का विवरण दिया गया है। उसका नाम ''वकाए-उज्जमाँ'' भी है।
24. इलियट, 6/446-47। ब्रिटिश म्यूजियम, ऑर 1648, पृ. 181 ब। ऐसा लगता है कि किसी बहुत बाद के लेखक ने तुजुक, इकबालनामा तथा अन्य ग्रंथों (समकालीन अथवा परवर्ती) से जहाँगीर के शासनकाल के बारे में अनेक असंबद्ध किस्सों और दंतकथाओं का संकलन (बहुतों का साक्षात कथन के रूप में) किया था। इनमें सब पर पूरी तरह विश्वास नहीं किया जा सकता।
25. ब्रि. म्यू. ऑर. 1648, पृ. 195 तथा क्रमशः इलियट 6/451.
26. जब जहाँगीर 1619 ई. में वृंदावन में था, खुसरो को कैद से मुक्त किया गया और दरबार में आने और सम्मान प्रदर्शित करने की उसे अनुमति दी गई—तुजुक 280। इन्तखाब के अनुसार अजीज कोका ने जदरूप गोसाईं से खुसरो की मुक्ति के लिए प्रार्थना करने के लिए कहा था (3/129-30)। 1619 में लिखते हुए कमी सरहिंदी खुसरो से शुरू करके बादशाह के पुत्रों की प्रशंसा करता है।
27. इन्ता के वक्तव्य से कि खुसरो, खानेजहाँ और खाने आलम 1620 ई. में काश्मीर-प्रयाण के समय बादशाह से एक मंजिल पीछे सवार हुए (3/128), से ऐसा लगता है कि खानेजहाँ को खुसरो पर दृष्टि रखने का उत्तरदायित्व सौंपा गया था। पर मुतामद खाँ स्वयं अपने कथन का उस समय विरोध करता है जब वह इन्ता में यह कहता है कि जिस समय खुसरो को शाहजहाँ के सुपुर्द किया गया, वह जेल में दीर्घ काल तक रह चुका था। (2/176)। अहवाल में वह लिखता है कि उस समय खुसरो ख्वाजा अबुल हसन की देखरेख में जेल में था। (फो. 15 ब)।
28. पालकी से चलने और काश्मीर पहुँचने से पहले जहाँगीर ने सड़क के सँकरी होने के कारण यह आदेश दिया कि आसफ खाँ और मुतामद खाँ के अतिरिक्त कोई अन्य अधिकारी उसके साथ सवार होकर न चले। तुजुक 292-93. इन्ता 138. इस तथा इससे पहले की टिप्पणियों में उठाई गई बातों के संदर्भ में ऐसा लगता है कि ऑर. 1648 में उल्लिखित किस्सा तुजुक तथा इन्ता में वर्णित घटनाओं से विस्तृत परवर्ती दंतकथाओं पर आधारित रहा होगा।
29. तुजुक 287-89. उसका वर्णन निश्चित तौर पर उस समय खुसरो के कैद की संभावना के विरुद्ध जाता है।
30. उदाहरणार्थ, अजीज कोका का परिवार :

खाने आजम, 5000; कुत्बुद्दीन मुहम्मद खाँ, 5000; मीरन खाँ, 4000; शरीफ-मुहम्मद खाँ, 3000; शाह मुहम्मद खाँ, 2000; शम्सुद्दीन हुसैन (बाद में जहाँगीर कुली खाँ), 2000; शादमन, 1500। अजीज कोका स्वयं अकबर के शासनकाल में 7000 के मनसब पर पहुँचा था।

मानसिंह का परिवार :

Scanned with CamScanner

कल्याण दास, 5000; मानसिंह, 7000; जगन्नाथ, 5000; रायसिंह 4000/3000; रामचन्द्र, 3000; माधोसिंह, 3000/2000; सूरजसिंह, 2000 आदि।

31. इस बात का कोई प्रमाण नहीं कि खानेआज़म ने गुटबाज़ी 'गुट' से समझौता किया था, जैसा कि बेनी प्रसाद का सुझाव है। रो के अनुसार शाहजहाँ का खानेआज़म की अपेक्षा अब्दुल्ला खाँ फ़िरोज़ जंग के प्रति अधिक झुकाव था। पर्चास, 4/359

32. पदोन्नतियों और नियुक्तियों का विवरण तुज़ुक पर आधारित है।

33. अहवाल, पृ. 8 ब।

34. तुज़ुक, 190

35. वही, 126-27

36. वही, 196

37. वही, 320

38. वही, 305

39. उपर्युल्लिखित सूचना तुज़ुक पर आधारित है।

40. उदाहरण के लिए, खाने आलम, खाने जहाँ, मुर्तज़ा खाँ, अनीराय सिंह दलन, खाने आज़म, ख्वाजा अबुल हसन, आदि।

41. यह पत्र जनाना हिस्सा के मजलस-ए-खाने जहाँ मुज़फ्फर खाँ या स्वर्णअखरनामा वगैरा (ब्रिटिश म्यूज़ियम, एड 16, 859 फो / 17 ब-19 ब) में स्पष्टतः गलती से शामिल कर लिया गया है। मैं अपने सहयोगी डॉ. इरफ़ान हबीब का इस पत्र के प्रति ध्यान आकर्षित करने के लिए कृतज्ञ हूँ।

42. तुज़ुक, 254

43. अहवाल फो. /18 ब-19 ब

44. पर्चास 4/359

45. जहाँगीर का कथन है कि खुर्रम को खाने आज़म की प्रार्थना पर नियुक्त किया गया था। तुज़ुक 126। पर इसका समर्थन पृ. 125 पर पहले दिए गए विवरण से नहीं होता।

46. तुज़ुक, 58

47. तुज़ुक, 58

48. तुज़ुक, 128। खुसरो पर से प्रतिबंध 1613 ई. के शरद में हटा लिए गए थे। वही, 123.

49. वही, 164

50. तुल. काज़ी सरहिंदी फो. 412 ब, अहवाल फो. 12 अ तथा ब।

51. तुज़ुक, 239

52. वही, 267

53. खुर्रम के पतन तथा खुसरो की पुनः प्रतिष्ठा की अफवाहें (ऊपर उद्धरित) जो सितंबर 1619 ई. में प्रचलित हो गई थीं, इस कल्पना का समर्थन करती हैं।

54. शहरयार की सगाई, नवंबर-दिसंबर 1620, तुज़ुक 320; शाहजहाँ का प्रस्थान, दिसंबर, 1620, वही, 322

55. मुतामद खाँ साफ़-साफ़ कहता है कि लाडली बेगम की शहरयार से सगाई शाहजहाँ विरोधी कार्य था। अहवाल फो. 17 अ।

56. तुज़ुक, 323

57. 'गुट' के टूटने के कारणों में डॉ. बेनी प्रसाद धार्मिक कारक का उल्लेख करते हैं—शाहजहाँ शनैः शनैः अपने शिया साथियों से विमुख हो गया और ईरानी हित स्वयं के लिए शाहजहाँ के विकसित होते हुए सुन्नी दल से खतरा अनुभव करने लगे—उपरोक्त 271, 276। नूरजहाँ को शिया सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं है। उसका धर्म कोई भी रहा हो, यह संभव है कि उसका भाई आसफ़ खाँ भी उसी धर्म को मानता था। यह मानने का कोई कारण नहीं है कि शाहजहाँ आसफ़ खाँ से विमुख हो गया था।

58. तुलनीय, खाने आज़म का पत्र, ब्रि. म्यू. एड. 16, 859

59. वही।

60. उदाहरणार्थ, खाने खानाँ, खाने आज़म, मानसिंह, आसफ़ खाँ, जफ़र बेग, आदि।

61. तुलनीय, जहाँगीर द्वारा लिखा गया उसका मृत्यु संवाद, तुज़ुक, 339, तुल. पृ. 136 भी।

62. उदाहरण के लिए आसफ़ खाँ को फटकारा जाना, तुल. पर्चास 4/282-83

63. तुज़ुक से ऐसा लगता है कि शहरयार की लाडली बेगम से सगाई जहाँगीर तथा एत्मादुद्दौला के बीच तय हुई थी—तुज़ुक, 320. 1622 ई. में महाबत खाँ ने नूरजहाँ तथा आसफ़ खाँ की स्थिति में अंतर किया था। उसने पहले के आमंत्रण का उत्तर दिया था, पर इस बात पर ज़ोर दिया था कि दूसरे को राजधानी से हटा दिया जाए—अहवाल फो. 3, 18 ब-19 ब।

Scanned with CamScanner